जन्म शताब्दी पुस्तकमाला - ७३

देवसंस्कृति त्याग और बलिदान की

(प्रवचन)

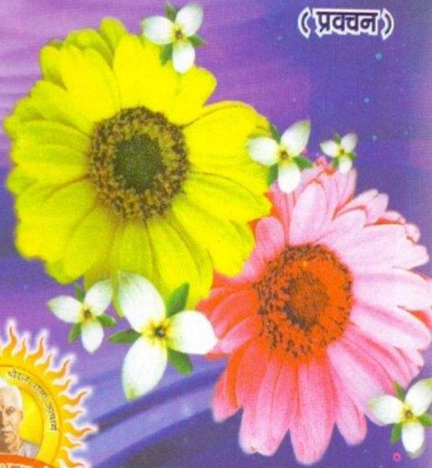

जन्म शताब्दी

देव संस्कृति त्याग और बलिदान की

गायत्री मंत्र हमारे साथ-साथ—

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

देवियो, भाइयो ! दैवीय सभ्यता पर जब कभी मुसीबतें आई हैं, लोगों ने जीवन में कठिनाइयाँ उठाकर भी उसकी रक्षा की है। उच्च आदर्शों के लिए त्याग की, बलिदान की संस्कृति रही है, यह देवसंस्कृति। उन दिनों जब लंका की आसुरी सभ्यता का आतंक सब ओर छाया हुआ था, सब जगह त्राहि-त्राहि मची हुई थी। मालूम पड़ता था कि अब न जाने क्या होने वाला है और न जाने क्या होकर रहेगा? अनीति जब बढ़ती है, अवांछनीयताएँ जब बढ़ती हैं, दुष्टताएँ जब बढ़ती हैं, स्वार्थपरताएँ जब बढ़ती हैं, तो मित्रो! सारे विश्व का सत्यानाश हो जाता है। आदमी स्वार्थी होकर के यह सोचता है

कि हम अपने लिए फायदा करते हैं, लेकिन वास्तव में वह अपने लिए भी सर्वनाश करता है और सारे समाज का भी सर्वनाश करता है। ये है आसुरी सभ्यता। इसमें पहले आदमी स्वार्थी हो जाता है और स्वार्थांध होने के बाद में दुष्ट हो जाता है, पिशाच हो जाता है। स्वार्थी जब तक सीमित रहता है, तो वहाँ तक ठीक है, वहाँ तक फायदे में रहता है। लेकिन जहाँ एक कदम आगे बढ़ाया, फिर आदमी नीति छोड़ देता है, मर्यादा छोड़ देता है, सब शालीनताएँ छोड़ देता है और सत्यानाश पर उतारू हो जाता है। यह है आसुरी सभ्यता का क्रम।

लंका की आसुरी सभ्यता उस जमाने में सब जगह आतंक फैला रही थी और सारा विश्व, सारे देश त्राहि-त्राहि कर रहे थे कि अब क्या होने वाला है ? हर आदमी अनीति के मार्ग पर चलने का शिक्षण प्राप्त कर रहा था और अनाचार के लिए कदम बढ़ाता हुआ चला जा रहा था, रावण के राज्य में। रावण की इस सभ्यता और संस्कृति में देवसंस्कृति के पक्षधरों

को यह विचार करना पड़ा कि इसका प्रतिरोध कैसे किया जाएगा? इसकी रोकथाम कैसे की जाएगी? संतुलन कैसे बिठाया जाएगा? भगवान ने भी यह प्रतिज्ञा कर रखी थी कि हम धर्म की स्थापना के लिए और अधर्म के विनाश के लिए वचनबद्ध हैं। इसके लिए वे विचार करने लगे कि क्या करना चाहिए। अंत में फैसला हुआ कि अयोध्या में लंका की तुलना में एक ऐसा मोर्चा खड़ा करना चाहिए, जो अनीति से लोहा ले सके।

लंका विजय

मित्रो! अयोध्या में लंका के विरुद्ध मोर्चा खड़ा किया गया। एक तो मोटी सी बात यह थी कि रावण बड़ा खराब आदमी था। एक बंदूक लेकर जाइए और उसे मार डालिए, खत्म कर दीजिए। यह क्या है? यह बहुत छोटा सा तरीका है। इससे कोई संस्कृति नष्ट नहीं हो सकती, परंपराएँ नष्ट नहीं हो सकतीं। व्यक्ति मरते हैं और फिर नए व्यक्ति पैदा हो जाते हैं। रावण के बारे में तो कहावत भी थी कि

रामचंद्र जी जब उसके तीर मारते थे, तो नया रावण बनकर खड़ा हो जाता था। बेटे! संस्कृतियाँ मारने से नहीं मरती हैं। वे दूसरे तरीकों से मरती हैं। आसुरी संस्कृति को हम किसी एक व्यक्ति को मारकर नहीं मार सकते।

रावण को मारना तो था जरूर। विचार किया गया। भगवान ने विचार किया, देवताओं ने विचार किया कि मारने से काम नहीं चलेगा। लंका को नष्ट कर देंगे, रावण को मार देंगे, अमुक को मार देंगे, पर इससे काम नहीं बनेगा, क्योंकि परशुराम जी बहुत दिनों पहले ऐसा एक प्रयोग कर चुके थे। ऐसे लोगों को उन्होंने एक बार मारा, दो बार मारा, तीन बार मारा, पर मारने से काम नहीं चला। दैत्यों को इक्कीस बार मारकर वे यह कोशिश करने लगे कि पृथ्वी से असुरों को हम मिटा देंगे, तो काम चल जाएगा, परंतु काम चला नहीं। आखिर में परशुराम जी ने कुल्हाड़ा नदी में फेंक दिया और उसके स्थान पर फावड़ा उठा लिया। फावड़ा उठाया

और नए-नए उद्यान लगाने लगे, बगीचे लगाने लगे। उनकी हार और पराजय ने स्वीकार किया कि कुल्हाड़ी के द्वारा हम वह कार्य नहीं कर सकते कि राक्षसों और असुरों को मारकर दुनिया खाली कर दें। इसके लिए एक और काम करना पड़ेगा, हमको हरियाली लगानी पड़ेगी, उगानी पड़ेगी। यही फैसला अयोध्या के संबंध में हुआ।

देव संस्कृति का उदय

अयोध्या में देव संस्कृति का उदय आरंभ हो गया। आसुरी संस्कृति से मुकाबला करने वाली देव संस्कृति। देव संस्कृति का उदय कैसे हुआ? वास्तव में अयोध्या में लंका के विरुद्ध मोर्चाबंदी शुरू हो गई थी। कैसे हुई थी? बेटे! वे परंपराएँ आरंभ की गईं, जिनको देख करके दूसरों की हिम्मत बढ़ती है, हौंसले बढ़ते हैं। हौंसले बढ़ाने के लिए बेटे, व्याख्यान एक तरीका तो है और हम काम में भी लाते हैं, लेकिन वह प्रारंभिक तरीका है। उपदेश करना और शिक्षण करना ये भी ठीक है। प्रारंभिक जानकारी के

लिए यह भी अच्छा है, लेकिन उपदेश करने से, व्याख्यान देने से प्रेरणाएँ नहीं मिलतीं, दिशाएँ नहीं मिलतीं, आवेश नहीं आते, उत्साह नहीं बढ़ते, जीवन नहीं आते, जोश नहीं आते। तो सत्संग से गुरुजी? नहीं, बेटे! सत्संग से भी नहीं और कलम से? कलम से तो आप बहुत अच्छा लिखते हैं। बेटे, हम अभी और अच्छा लिखेंगे, पर अगर आपका ये ख्याल है कि कलम से लिख करके आप अपना काम चला सकते हैं, तो अगर ऐसी बात रही होती, तो अब तक संपन्न लोगों ने ये काम, जो दुनिया चाहती है, बना सकते थे। अखबार प्रतिदिन लाखों की संख्या में छपते हैं। जापान, शिकागो में एक-एक अखबार करीब-करीब पचास लाख रोज छपता है। अपने हिंदुस्तान में सबको मिलाकर पचास लाख तादाद होगी। एक ही अखबार जब इतना छपता है; तो इतने आदमियों तक विचार एक ही दिन में पहुँच जाते होंगे? हाँ, बेटे! पचास लाख आदमियों तक अखबार के विचार एक ही दिन में पहुँच जाते हैं,

लेकिन अगर कलम की दृष्टि से और छापेखाने की दृष्टि से लोगों का विचार-परिवर्तन संभव रहा होता, तो वह हमने कबका कर लिया होता।

और गुरुजी! वाणी के द्वारा? वाणी के द्वारा संभव रहा होता तो बेटे रेडियो स्टेशन जिनके पास हैं, उनको वाणी के द्वारा व्याख्यान करने की जरूरत नहीं थी। दिल्ली से लेकर और कितने रेडियो स्टेशन हैं, वहीं पर एक-एक आदमी आराम से बिठा दिया होता और एक-एक 'स्पीच' झाड़नी शुरू कर दी होती, तो सारे के सारे देश के लोगों तक आवाज पहुँच सकती थी और उससे आसुरी सभ्यता का, अनाचार का, अनावश्यक परिस्थितियों का निवारण कर सकना संभव रहा होता। क्या ऐसा संभव हो सकता है? नहीं, ऐसा संभव नहीं हो सकता।

स्वे स्वे आचरेण शिक्षयेत्

इसीलिए मित्रो! देवताओं को क्या करना पड़ा कि अयोध्या से दैवी सभ्यता की शुरुआत करनी पड़ी। कैसे शुरुआत करनी पड़ी? वहाँ जो आदमी

छोटे से खानदान में थे, उन्होंने कहा कि हम अपने नमूने पेश करेंगे लोगों के सामने कि दैवी सभ्यता कैसी हो सकती है और हम इस सभ्यता का विकास क्यों करना चाहते हैं? दैवी सभ्यता के पीछे क्या परिणाम निकल सकते हैं? ये साबित करने के लिए दशरथ के कुटुंब ने, परिवार ने उसी तरह के नमूने पेश करने शुरू कर दिए, जैसे कि लंका वालों ने किए थे। उन्होंने क्या पेश किए? बेटे, सबके सब एक दिन इकट्ठा हो गए और फैसला करने लगे कि हम बड़े काम करके दिखाएँगे, ताकि दुनिया समझे कि दैवी सभ्यता क्या हो सकती है और दैवी सभ्यता का अनुकरण करने के लिए जोश और जीवट कैसे उत्पन्न किया जा सकता है?

विश्वामित्र जी ने वहाँ से शुरुआत की और राजा दशरथ से कहा कि आप अपने बच्चे हमारे हवाले कीजिए। उन्होंने कहा कि बच्चे तो हमको जान से भी प्यारे हैं। उन्हें हम आई० ए० एस० बनाएँगे, पी० सी० एस० बनाएँगे। आप इन्हें कहाँ

ले जा सकते हैं? विश्वामित्र ने कहा, आई० ए० एस०, पी० सी० एस० तो पीछे बनते रहेंगे, पहले इन्हें मनुष्य बनना चाहिए और देवता बनना चाहिए। विश्वामित्र और दशरथ जी के बीच जद्दोजेहद तो बहुत हुई, लेकिन दैवी सभ्यता की, संस्कृति की शुरुआत तो कहीं से करनी ही थी। विश्वामित्र ने रजामंद कर लिया और कहा, बच्चे हमारे हवाले कीजिए। क्या करेंगे इनका? दैवी सभ्यता का शिक्षण करेंगे और ये दोनों अनीति के विरुद्ध संघर्ष करेंगे। अरे गुरुजी, ये तो छोटे बच्चे हैं। नहीं, ये छोटे बच्चे नहीं हो सकते। जो व्यक्ति सत्य का हिमायती हुआ, वह कभी छोटा नहीं हुआ। सत्य का हिमायती हमेशा बलवान रहा है और जोरदार रहा है। उसके सामने चाहे वह मारीच ही क्यों न हो, सुबाहु ही क्यों न हो, चाहे वह खर-दूषण ही क्यों न हों, कोई भी क्यों न हो, वह कमजोर ही रहेगा और उसको हारना पड़ेगा, झख मारनी पड़ेगी। विश्वामित्र जी ने राजा दशरथ को समझा दिया और वह शिक्षण

देने के लिए, जो योगियों और तपस्वियों के आश्रम में रह करके पाया जाना संभव है, दोनों बच्चों को ले गए।

शुरुआत व्यावहारिक जीवन से

ये क्या होता है? बेटे! ये दैवी सभ्यता की शुरुआत होती है। यह न तो व्याख्यान से हुई, न कथा से हुई और न सत्संग से हुई। कैसे हुई? व्यावहारिक जीवन से हुई। इससे कम में नहीं हो सकती। कोई श्रेष्ठ परंपरा स्थापित करने के लिए व्यक्तिगत जीवन का आदर्श उपस्थित किए बिना दुनिया इधर-उधर नहीं हो पाएगी। कथा, व्याख्यान, सत्संग आदि सब खेल-खिलौने हैं। इनसे हम उसी तरह रास्ता बनाते हैं, जिस तरह रेलगाड़ी के लिए पटरी बनाते हैं। लेखनी के द्वारा, वाणी के द्वारा, प्रचार माध्यमों के द्वारा, जनसाधारण की शिक्षा के द्वारा, सत्संगों के द्वारा, कथाओं के द्वारा हम रेलगाड़ी की पटरी बनाते हैं, बस। फिर रेलगाड़ी कहाँ से चलेगी? रेलगाड़ी तो बेटे, अपने व्यक्तिगत आदर्श

उपस्थित करने से पैदा होती है। इससे कम में हो ही नहीं सकती। इस तरह उन्होंने पटरी बनाई और वहीं से शुरुआत हुई। पीछे सबने फैसला लिया कि इस दैवी संस्कृति, दैवी सभ्यता का स्वरूप क्या हो सकता है, उसको बताने के लिए एक से एक बढ़िया त्याग करेंगे और बलिदान करेंगे। सारी की सारी उस कंपनी ने, कमेटी ने फैसला कर लिया कि हम दुनिया को बताते हैं कि रामराज्य कैसे हो सकता है ?

रामराज्य कैसे आया?

मित्रो! रामराज्य का बीज अयोध्या में बोया गया और वह भी एक छोटे से खानदान में। कैसे बो दिया गया? बेटे! ऐसे बो दिया गया कि थोड़े से आदमी थे, लेकिन वे एक से एक बढ़िया त्याग करने पर उतारू हो गए। रामचंद्र जी ने कहा कि राजगद्दी क्या होती है ? इससे तो वनवास बेहतरीन है। इनसान को क्या चाहिए ? पैसा चाहिए, विलासिता चाहिए, नौकरी में तरक्की चाहिए, प्रमोशन चाहिए, लेकिन उन लोगों ने कहा कि हमें त्याग चाहिए, बलिदान

चाहिए। त्याग और बलिदान से आदमी महामानव बनता है, महापुरुष बनता है, तपस्वी बनता है, ऐतिहासिक पुरुष बनता है और पैसे से? पैसे बढ़ने से आदमी बनता है धूर्त और ढोंगी। और क्या बनता है? न जाने क्या-क्या बनता है।

मित्रो! क्या हुआ? उन्होंने त्याग और बलिदान के लिए, आदर्श उपस्थित करने के लिए ये फैसले किए कि हमको अब बड़े कदम उठाने चाहिए, ताकि रावण की लंका को नीचा दिखा सकें। रामचंद्र जी ने कहा कि हम ऋषियों के आश्रम में जाकर के वनवासी जीवन जीने के लिए, तपस्वी जीवन जीने के लिए रजामंद हैं और राजपाट छोड़ने के लिए रजामंद हैं। परिस्थितियाँ ऐसी बन गई थीं और रामचंद्र जी जटाजूट बाँधकर नंगे पैर जंगलों में चलने और वनवास में रहने के लिए उतारू और आमादा हो गए। लक्ष्मण जी ने कहा कि भाई-भाई के बीच में कैसे मोहब्बत होनी चाहिए, इसका आदर्श उपस्थित करने के लिए मुझे भी रामचंद्र जी का

अनुकरण करना चाहिए। वह औरंगजेब वाला अनुकरण नहीं, जिसने बाप को कैद कर लिया था और भाइयों को मार डाला था। वह नहीं बेटे, दूसरा वाला आदर्श। उसके लिए क्या करना पड़ेगा? उसके लिए दैवी संस्कृति की सभ्यता की स्थापना करनी पड़ेगी, ताकि लोगों के भीतर से उमंगें, लोगों के भीतर से जोश, लोगों के भीतर से जीवट, एकदूसरे के नमूने देख करके पैदा हो सकें।

लक्ष्मण जी ने कहा, सिद्धांतों के लिए भाई को भाई के लिए क्या करना चाहिए और सुखों की अपेक्षा दु:खों का वरण कैसे करना चाहिए। इसके लिए हमने फैसला किया है, कि हम आपके साथ-साथ रहेंगे और आपकी निगरानी करेंगे। सीता जी ने भी कहा कि तप और त्याग के मामले में हम पीछे नहीं रह सकते। आपको वनवास हुआ है, लेकिन देवर जी को नहीं हुआ है, फिर भी वे राज-पाट के विलासी जीवन की अपेक्षा वनवासी जीवन को श्रेष्ठ समझते हैं, इसलिए हमको भी विलासी जीवन

स्वीकार नहीं है। हम भी वनवासी जीवन स्वीकार करेंगे। सीता जी रजामंद हो गईं और वे भी चलने लगीं। बेटे, मैं देखता हूँ कि अयोध्या में ऐसे बीज बोए गए, जो कल्पवृक्ष की तरह उगे। कौशल्या जी ने अपने बच्चे के सिर पर हाथ फेरा और यह कहा कि जब तुम्हारी माता ने आज्ञा दी है, तो तुम वनवास जा सकते हो। उन्होंने भी छाती पर पत्थर रख करके उन्हें आज्ञा दे दी। किसके लिए? दैवीय संस्कृति के, दैवीय सभ्यता के विकास के लिए, त्याग और बलिदान करने के लिए।

मित्रो! दैवीय संस्कृति वह है, जो त्याग के लिए, बलिदान के लिए प्रोत्साहन देती है, आगे बढ़ाती है और दैत्यों की सभ्यता, राक्षसों की सभ्यता वह है, जो न स्वयं श्रेष्ठ काम करते हैं और न किसी को करने देते हैं। न चलते हैं और न चलने देते हैं और पत्थरों के तरीके से, जंजीरों के तरीके से जकड़ करके बैठ जाते हैं। ये राक्षस हैं, दुष्ट हैं और पिशाच हैं, जो सिद्धांतों के लिए, त्याग के लिए, बलिदान

के लिए मार्ग में अड़ंगे लगाते हैं और ये कहते हैं कि ऐयाशी अच्छी चीज है, मालदार होना बहुत अच्छी बात है, जमाखोरी बहुत अच्छी बात है। आप भी विलासी होइए और हमको भी विलासी होने दीजिए। मित्रो! ये हमारे खानदान वाले नहीं हैं। ये हमारे दुश्मन हैं।

मित्रो! कौशल्या जी ने कहा कि आप वनवास जा सकते हैं। हम आपको आज्ञा देते हैं, आप खुशी-खुशी जाएँ। इस मामले में कोई भी पीछे नहीं रहा। सुमित्रा ने अपने बेटे लक्ष्मण से कहा कि बेटे, अगर तुम्हारे बड़े भाई वनवास जा रहे हैं, तो मैं त्याग के रास्ते पर, बलिदान के रास्ते पर चलने से तुम्हें नहीं रोक सकती। सुमित्रा ने कहा—"**जो पै सीय रामु वन जाहीं। अवध तुम्हार काजु कछु नाहीं।**" अयोध्या में तुम्हारा काम नहीं है। यहाँ के विलासी जीवन में, ऐयाशी के जीवन में तुम्हारा कोई काम नहीं है। माँ ने छाती पर पत्थर रखकर के सिर पर हाथ फिराया, आशीर्वाद दिया और कहा कि तुम

जाओ वनवास। न केवल माँ ने वरन उनकी पत्नी उर्मिला ने भी कहा कि ठीक है, आप श्रेष्ठ काम के लिए जा रहे हैं, तो मैं ऐसी घटिया नहीं हूँ, जो आपके भावी जीवन को रोक सकूँ। आप चौदह वर्ष के लिए वनवास जाइए। आप चौदह वर्ष ब्रह्मचर्य से रह सकते हैं, मैं भी ब्रह्मचर्य से रह सकती हूँ। आप एक आदर्श स्थापित करने के लिए चल पड़िए।

बेटे! ये क्या हो गया? सभ्यता की शुरुआत हो गई। ये कौन सी सभ्यता थी? ये दैवीय सभ्यता थी, जिसने राक्षसों को परास्त किया। तो क्या रामचंद्र जी ने रावण को मार डाला था? बेटे, रावण को मारने भर से कोई परास्त नहीं हो सकता था। नए आदमी फिर से पैदा हो सकते थे। युद्धों के नतीजे हमने देख लिए हैं। पहला वर्ल्ड वार जब पैदा हुआ था, तो उसके पेट में उसी दिन दूसरे युद्ध का बीजारोपण हो गया था। उसमें से दूसरा वाला जो राक्षस निकला, वह पहले वाले से भी ज्यादा भयंकर था और जब 'सैकंड वर्ल्ड वार' हुआ तो उसने भी बहुत बड़ा

विनाश किया और लोगों से कहा कि जो भी बुरे आदमी हैं, दुश्मन हैं उन सबको हम मार डालेंगे और सबकी हत्या कर देंगे। हम तोप चलाएँगे, बम चलाएँगे और सफाया कर देंगे।

मित्रो! हम देखते हैं कि 'सैकंड वर्ल्ड वार' अभी खत्म नहीं हुआ है, 'थर्ड वर्ल्ड वार' के लिए ऐसा सर्वनाशी वातावरण अभी से तैयार हो रहा है। 'थर्ड वर्ल्ड वार' अभी अपनी माँ के पेट में बैठा हुआ है, लेकिन जब वह माँ के पेट से निकलेगा, तो सफाया करेगा। किसका सफाया करेगा? सरस्वती फिर दुनिया में रहेगी नहीं और मनुष्य जाति का अस्तित्व दुनिया में रहेगा नहीं। अक्ल दुनिया में रहेगी नहीं, जिसके बल पर अभी मनुष्य मरने-मारने और लड़ने पर उतारू हुआ है। ये सभ्यता फिर जिंदा रह नहीं सकती, क्योंकि तीसरा वाला बच्चा जो पेट में बैठा हुआ है, वह सबको मार डालेगा।

मित्रो! बर्ट्रेंड रसेल ने ठीक कहा था कि 'थर्ड वर्ल्ड वार' के पश्चात फिर एक और 'वार' होगा

अर्थात चौथी लड़ाई भी होगी, लेकिन इस लड़ाई में क्या होगा? चौथी लड़ाई में आदमी ईंट और पत्थर का उपयोग करेगा, फिर टैंकों का उपयोग न हो सकेगा। ईंट और पत्थरों का उपयोग क्यों होगा? क्योंकि तब मनुष्य बुद्धिहीन हो जाएँगे। तब जो कुछ प्राणी बचेंगे वे इतने बेअक्ल, इतने साधनहीन और इतने असहाय हो जाएँगे कि ढेला फेंकने के अलावा लाठी चलाने लायक भी नहीं रह जाएँगे। उनके पास तब न इतनी अक्ल रहेगी, न साधन रहेंगे और न संपदा रहेगी। सबका सफाया हो जाएगा।

बेटे, मैं जानता हूँ कि संसार में जो मारक प्रक्रियाएँ हैं, वे आदमी को समाप्त नहीं कर सकतीं। इनसे कोई समाधान नहीं हो सकता। नहीं साहब हम तो मारेंगे। अच्छा है मारिए। मैं तो हिमायती हूँ मारने का, क्योंकि मारक तत्त्वों की कभी जरूरत भी पड़ सकती है, मैं तो यह नहीं कह सकता कि जरूरत नहीं है और कभी होगी नहीं। कभी जरूरत हो भी सकती है, लेकिन ज्यादा जरूरत नहीं है।

दानवी सभ्यता, जिसने कि हमारे सारे के सारे मानव समाज को बुरे तरीके से जकड़ रखा हैं, इसको मारने के लिए वो तत्त्व काफी नहीं है, जिनको राजनीति वाले हथियारों के रूप में प्रयोग करना चाहते हैं और हम किस तरीके से प्रयोग करना चाहते हैं? हम संघर्ष के द्वारा करना चाहते हैं, घिराव के द्वारा करना चाहते हैं, सत्याग्रह के द्वारा लड़ना चाहते हैं। क्या इससे ये दूर हो जाएँगे? नहीं, इससे ये दूर नहीं हो सकते।

फिर कैसे दूर हो सकते हैं? मित्रो! दैत्यों को मारने के लिए देवता का पैदा होना आवश्यक है। दैत्य को दैत्य भी मार सकता है। दो राक्षस थे। दोनों आपस में लड़े। मरे तो सही दोनों, लेकिन दोनों के मरने के बाद में फिर नए राक्षस पैदा हो गए। नई पौध तैयार हो गई। दैत्यों को मारने के लिए देवताओं की जरूरत हुई। अयोध्या में देवता पैदा किया गया। देवता कैसे पैदा किया? बेटे, देव परंपराएँ पैदा कीं। देव परंपराओं का नाम है, देवता। छोटे से कुटुंब ने

लोगों के सामने नमूने प्रस्तुत किए, सिद्धांतों के लिए, आदर्शों के लिए, लोकहित के लिए। दूसरे लोग कहते रहे, इसमें हमारा कोई लाभ नहीं है। राक्षसों ने हमारे ऊपर हमला नहीं किया है, रावण ने हमको कोई नुकसान नहीं पहुँचाया है, लेकिन अयोध्यावासियों ने कहा कि हम दैवी सभ्यता की स्थापना करने के लिए अपने क्रिया-कलाप करते हैं और अपनी लीलाएँ करते हैं। इसका परिणाम क्या हुआ? बेटे, परिणाम यह हुआ कि दैवीय संस्कृति दैवीय सभ्यता पनपने लगी, बढ़ने लगी।

कैसे बढ़ी? आपने देखा नहीं? वानरों ने, रीछों ने ये कहा, अगर मनुष्य दैवीय सभ्यता को जीवन में ढाल सकते हैं, तो हमको भी ऐसा जीवन ढालने में क्या आपत्ति हो सकती है और हम भी ऐसा जीवन ढालने में क्यों पीछे रहेंगे? रीछ-वानर अपनी जान हथेली पर रखकर तैयार हो गए।

दैवीय सभ्यता क्या होती है? क्या वह मिठाई खाती है, महल बनाती है? नहीं बेटे, ऐसी नहीं होती

है, दैवीय सभ्यता। दैवीय सभ्यता ऐसी होती है, जिसमें एक ही वृत्ति रहती हैं, "हम देंगे।" देने के लिए वह अपना समय खरच करती है, श्रम खरच करती है, साधन खरच करती है और अपनी अक्ल खरच करती है, और बदले में मुसीबतें उठाने के लिए तैयार रहती है। यही है दैवीय सभ्यता। दैवीय सभ्यता का एक ही स्वरूप है कि हम व्यक्तिगत जीवन में कठिनाइयाँ उठाएँ। किसके लिए? सारे समाज के लिए, धर्म के लिए और संस्कृति के लिए। हम इनके संवर्द्धन के लिए कष्ट उठाएँ और इन्हें आगे बढ़ाएँ। दैवीय सभ्यता इसी का नाम है। बस न इससे कम और न ज्यादा। देवताओं का स्वरूप यही है। देवता वे नहीं हैं, जो ऐयाशी करते रहते हैं, मौज उड़ाते रहते हैं, कल्पवृक्ष के नीचे बैठे रहते हैं। देवता उन लोगों के नाम हैं, जो जीवनभर लोगों के लिए कठिनाइयाँ उठाते हैं। इंद्र देवता होता है। देवता कौन सा होता है? बेटे, बादल समुद्र में से पानी ढो-ढो करके मुश्किल से लाते हैं। वे कितनी मुश्किल और कितना

कष्ट उठाते हैं और हमें बिना जानकारी दिए, हमारे धन्यवाद की अपेक्षा किए बिना चुपचाप हमारे खेतों में पानी बरसा जाते हैं। ये देवता हैं।

मित्रो! वानर और रीछ किससे प्रेरित हुए? अयोध्या वालों से प्रेरित हुए। उनसे प्रेरित होकर उन्होंने कहा कि देवसेना में हम भी भरती होते हैं और देवत्व के संरक्षण के लिए हम भी कदम बढ़ाते हैं। वे चल पड़े। क्या नतीजा हुआ? ज्यादा विस्तार से नहीं बताना चाहता हूँ, किंतु इसका छोटा सा स्वरूप झाँकी बनाकर आपको बता सकता हूँ। जब मनुष्य जाति के लिए मुसीबतें आई हों, भविष्य के लिए आशंका आई हो कि हमारा भविष्य अंधकारमय होने वाला है, जैसा कि आज हमको दिखाई पड़ता है, तो क्या करना पड़ेगा? उपाय एक ही है, दूसरा कोई उपाय नहीं है। अब हमको दैवीय सभ्यता का ढाँचा खड़ा करना पड़ेगा, नमूना खड़ा करना पड़ेगा। नहीं साहब! हम राक्षस को मारेंगे। अरे बेटा वह मरेगा नहीं। हम उसको गालियाँ देंगे, विरोध करेंगे।

बेटे, इससे भी कुछ बनने-बिगड़ने वाला नहीं है। असली विरोध इस बात का है कि हम उसके मुकाबले में ऐसी जबरदस्त तैयारी करें, जिससे प्रेरणा लेकर के, प्रभावित हो करके लोग उस रास्ते पर चलें। उस पर चलने के लिए यह आवश्यक है कि आदमी दैवीय सभ्यता के अनुरूप त्याग और बलिदान करने के लिए तैयार हो जाएँ।

मित्रो! यही था रावण मारने का उपाय। सारे के सारे लंकाकांड का जो परिणाम मैंने देखा, वह यह कि त्याग करने के लिए, बलिदान करने के लिए हर आदमी तैयार हो गया। छोटे-छोटे जानवर भी तैयार हो गए। रीछ-वानर तो तैयार हो ही गए थे, कुछ और पक्षी श्रेणी के भी तैयार हो गए। उनमें से एक गिलहरी आई और बोली, आपकी सहायता के लिए हम त्याग करेंगे और सहयोग करेंगे। क्या करेगी? हम कष्ट उठाएँगे और मशक्कत करेंगे। फिर फायदा क्या होगा? हम उस पुल के लिए रास्ता खोलेंगे, जिस पुल पर से होकर ये रीछ-वानर

पार हो सकें और रावण को मार सकें। इसलिए हम समुद्र को पाटने के लिए अपने बालों में मिट्टी भरकर के ले जाएँगे और उसमें डालेंगे।

ये क्या था? ये दैवीय सभ्यता है बेटे और कुछ नहीं है। गिलहरी कौन थी? मुझे गिलहरी का जिक्र करने की जरूरत नहीं है। मैं गिलहरी के पीछे नहीं पड़ना चाहता। मैं तो दैवीय सभ्यता की बात कहता हूँ। दैवीय सभ्यता जहाँ कहीं भी हुई है, वहाँ रावण मरे हैं, कुंभकरण मरे हैं, आततायी मरे हैं और वहाँ रामराज्य आया है, सतयुग आया है, धर्मयुग आया है, अगर लोगों ने गिलहरी के तरीके से अपने नमूने पेश करने की कोशिश की है। निस्स्वार्थ भाव से जनहित के लिए, श्रेष्ठ परंपराओं के संरक्षण के लिए त्याग और बलिदान का जहाँ सवाल आया, वहाँ गिलहरी ने नमूना पेश किया। बेटे, गिलहरी की कथा कहते-कहते हमारा मन नहीं भरता। गिलहरी ने क्या किया? परंपरा कायम की। गिलहरी की जरा सी मिट्टी से क्या

हो गया? बालू से क्या हो गया? यह तो मैं नहीं जानता, लेकिन यहाँ बालू की नहीं, भावना की बात चल रही है। भावना जरा सी हो, चाहे छोटी हो या बड़ी हो, बड़ी जबरदस्त होती है और दुनिया में बहुत काम करती है।

मित्रो! क्या करना पड़ेगा कि जब परंपराएँ इस तरह की दिखाई पड़ती हों, तब आप विश्वास करना कि अब रामराज्य आने ही वाला है। किस तरीके की परंपराएँ दिखेंगी तब? जैसे कि छोटे-छोटे पखेरुओं ने करके दिखाई। गीधराज एक कोटर में बैठा हुआ था और मजे से दिन काट रहा था। लेकिन उसको मौज के दिन काटना सहन नहीं हुआ। अनीति देखकर एक दिन वह तिलमिला गया और कहने लगा, यहाँ ये अनीति फैल रही है। किसी की बेटी का अपहरण ऐसे हो रहा है, तो हम जिंदा इन आँखों से नहीं देखेंगे। अपनी बेटी हो तो क्या, और किसी की बेटी हो तो क्या? अब हम इन जिंदा आँखों से ऐसा अधर्म नहीं देखेंगे। ये ठीक है कि हम रावण को

नहीं मार सकते, पर हम स्वयं तो मर सकते हैं। उसे मारना संभव नहीं हो सकता, मैं जानता हूँ। हरेक व्यक्ति पाप और अनीति को मार नहीं सकता, पर मर तो सकता है। मरना भी बहुत बड़ी बात है। बेटे मरने की ताकत मारने की ताकत से भी बहुत बड़ी है, तू जानता नहीं है। पर वह गिद्ध रावण को मार नहीं सका, मैं जानता हूँ, लेकिन उसने स्वयं मरकर वह काम करके दिखाया, जो हजार अँगरेजों को मारकर के भगत सिंह नहीं कर सकते थे। देश में तहलका नहीं मचा सकते थे।

अरे गुरुजी! मरने में तो हार होती है, पराजय होती है। मरने में नुकसान होता है, घाटा होता है। नहीं बेटे, किसी नेक मकसद के लिए मरना, मारने से भी ज्यादा बहादुरी का काम है। नुकसान करना भी एक बहादुरी का काम हो सकता है। मित्रो! पखेरू ने तो नुकसान उठाया और रावण से लड़ने गया। उसने कहा, हमारे जिंदा रहते आप सीता जी पर हमला नहीं कर सकते, सीता जी को नहीं ले जा

सकते। रावण ने कहा, आपके पास ताकत कहाँ है? तलवार कहाँ है? गीध ने कहा, नहीं सही, पर हमारे पास जान तो है और न्याय के लिए, आदर्श के लिए, धर्म के लिए हम मर तो सकते हैं। पखेरू युद्ध के लिए तैयार हो गया। रावण ने उसके पंख काटकर फेंक दिए। तो क्या पखेरू हार गया और रावण जीत गया? नहीं बेटे, पखेरू जीत गया। रामचंद्र जी जब आए, तो उन्होंने पखेरू को छाती से लगा लिया, अपने हाथों से उसके पंखों को साफ किया और अपनी आँखों के आँसुओं से उसके जख्मों को धोया। उसने कहा, भगवन्! मैंने तीनों लोकों का राज्य पा लिया और सब कुछ पा लिया। मैंने यश पा लिया और आज अमर हो गया। हजारों मनुष्यों को युगों-युगों तक प्रेरणा देने के लिए वह एक स्मारक बन गया, प्रकाशस्तंभ बन गया।

मित्रो! आदमी हो या कोई पक्षी हो, बुड्ढा हो, बिना पढ़ा हो या साधनहीन हो, तो भी कम से कम उसके भीतर इतनी हिम्मत अवश्य होनी चाहिए

कि अनीति का विनाश करने के लिए, लड़ाई लड़ने के लिए सीना तानकर खड़ा हो जाए। बेटे! बड़े-बड़े बादशाहों को तो हम भुला सकते हैं, लेकिन उस पखेरू को हम सदैव याद रखेंगे। उसे हम भुला नहीं सकते। उस पखेरू को न भुलाने का मतलब है, देवपूजन अर्थात देवत्व का पूजन। बेटे! भारतीय संस्कृति में देवत्व का पूजन करने की परंपरा है। यही परंपरा सतयुग को लाती है, धर्मयुग को लाती है। मानवजाति के उज्ज्वल भविष्य को लाती है। कौन सी परंपराएँ? जिनको हम दैवीय परंपराएँ कहते हैं। दैवीय परंपराएँ क्या होती हैं? तिलक लगाना, माला जपना, गंगाजी नहाना, सत्यनारायण की कथा कहना आदि, क्या यही दैवी परंपराएँ हैं? नहीं, बेटे! ये तो खेल-खिलौने मात्र हैं।

मित्रो! क्या करना पड़ेगा? दैवीय सभ्यता यह नहीं है। दैवीय सभ्यता वह है, जिसमें त्याग और बलिदान की बात करनी पड़ती है। बेटे! हजारों वर्षों का इतिहास जब हम पढ़ते हैं, तो हमको

दैवीय सभ्यता का यही स्वरूप दिखाई पड़ता है। रामचंद्र जी के बाद श्रीकृष्ण जी का नंबर आता है। श्रीकृष्ण जी का जीवन चरित्र जैसा कुछ भी आता है, उन्होंने जिन लोगों को साथ लेकर के काम शुरू किया था, उन लोगों के नाम थे, पांडव। पांडवों में क्या था? दैवीय सभ्यता थी। पांडव देवताओं से पैदा हुए थे। मैंने सुना है कि कुंती ने देवताओं का जप-पूजन किया था और जप-पूजन करने के बाद में बच्चे पैदा किए थे।

मित्रो! देवताओं के बेटों को कैसा होना चाहिए? अगर कोई देवता का बेटा है, तो उसके व्यवहार में और जीवन में क्या गुण आना चाहिए? इसे हम पाँचों पांडवों के जीवन में देख लेते हैं। हमको सबसे अच्छी घटना पांडवों की याद आती है। अज्ञातवास के समय कुंती अपने बच्चों के साथ एक ब्राह्मणी के यहाँ छिपी हुई थी। उस इलाके में कोई एक राक्षस रहता था। जो वहाँ के हर घर से एक-एक आदमी प्रतिदिन मारने के लिए बुलाया करता था

और उन्हें खा जाता था। नंबर के हिसाब से उस दिन ब्राह्मणी के बच्चे का नंबर आ गया। ब्राह्मणी रोने लगी। उसने कहा कि हमारे एक ही बालक था और वह भी आज राक्षस के हवाले होने जा रहा है। जब वह बैठी हुई रो रही थी, तो कुंती ने पूछा, बहन क्या बात है? ब्राह्मणी बोली कि हमारे पास एक ही बच्चा है और उसको आज राक्षस के पास जाना पड़ेगा। उसे मरना ही होगा। अब हम क्या कर सकते हैं?

कुंती ने कहा कि आपने अपनी जान जोखिम में डालकर हमको छिपा रखा है, तो हमारा भी तो कुछ कर्त्तव्य हो जाता है। हम भी तो कुछ करेंगे आपके लिए। उन्होंने कहा, बच्चो ! तुम पाँच हो। एक काम करो, यह जो ब्राह्मणी है, इसके एक ही बालक है। इसने अपनी जान जोखिम में डालकर हमको छिपाकर रखा है। इसलिए क्या करना चाहिए बच्चो? तुममें से एक बच्चे को अपना बलिदान कर देना चाहिए और ब्राह्मणी के बच्चे को बचा लेना

चाहिए। बच्चों ने कहा, माता जी! इससे बड़ा सौभाग्य हमारा क्या हो सकता है? भीम चले गए और उसे बचा लिया।

मित्रो! यह क्या है? यह है देवता का मन। देवता का मन वह होता है कि जब उसके जीवन में कोई त्याग करने, बलिदान करने का मौका आता है, तो बल्लियों उछलने लगता है। यह होता है, देवताओं का दिल। और राक्षसों का दिल कैसा होता है? राक्षसों का, चोरों का, घटिया आदमी का दिल यह है कि जब त्याग का वक्त आता है, तो वह थर-थर काँपने लगता है। हर समय जिसकी यही नीयत रहती है कि यह मंत्र जपूँगा, यह तंत्र जपूँगा, यह पूजा करूँगा और इससे यह पैसा कमाऊँगा, यह औलाद पाऊँगा, धन कमाऊँगा। कामना ही कामना, कामना ही कामना जिसके अंदर भरी हुई है, बेटे यह कोई अध्यात्म नहीं है।

ठीक है मित्रो! यह बच्चों का अध्यात्म रहा होगा। मैं यह तो नहीं कहता कि बच्चों को इसकी

जरूरत नहीं है। हम मिठाई बाँट करके और कोई लोभ देकर के बच्चों को अपने पास बुला लेते हैं। यह भी अध्यात्म का कोई हिस्सा होगा, पर मैं इसको ठूस कहता हूँ, भूसी कहता हूँ। किसकी? अध्यात्म की। भूसी कौन सी? जिसमें यह पाया जाता है कि अध्यात्म क्या है? बेटे, यह अध्यात्म का खिलवाड़ है, छिलका है, जूठन का पत्ता है। पत्ते पर मिठाई खाकर के लोग उसे फेंक देते हैं और कुत्ते उसे चाटने के लिए टूट पड़ते हैं, चट कर जाते हैं। यह भी हो सकता है प्राप्त करने की दृष्टि से। अध्यात्म को हम भौतिक चीजों को पाने के लिए इस्तेमाल करते हैं, इसलिए बेटे, मैं इसको जूठन का पत्ता कहता हूँ। किसी आदमी का खाया हुआ पत्ता फेंक दिया गया, दूसरा कहता है कि हमको भी दे दीजिए। हाँ बेटे, तुझे भी दे देंगे। आज की बात समाप्त।

॥ ॐ शांतिः ॥

❐

मुद्रक—युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा (उ. प्र.)